संपादकीय

भाषा

भाषा विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। संसार के कोने-कोने में निवास करने वाले मनुष्य किसी न किसी भाषा के माध्यम से अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। भौगोलिक कारणों से मनुष्यों की भांति भाषा के भी अनेक भेद पाए जाते हैं। महाभारत में इसका स्पष्ट उल्लेख है।[1] विद्वानों के मत से वर्तमान में १००० से अधिक जीवित भाषाएं प्रचलित हैं। इस विषय में सैकड़ों पुस्तकें भी प्रकाश में आ चुकी हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय आर्यभाषाओं को तीन कालों में विभक्त किया जा सकता है—

१. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें वैदिक एवं लौकिक संस्कृत आती है।
२. मध्य भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा का समावेश होता है।
३. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा काल—इसमें हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला, असमिया, तेलगू, कन्नड़, तमिल आदि भाषाएं आती हैं।

प्राकृत—

प्रकृति शब्द के दो अर्थ हैं—स्वभाव और जनसाधारण। इन अर्थों के आधार पर प्राकृत शब्द के भी दो अर्थ समझे जा सकते हैं—

१. जो प्रकृति/स्वभाव से ही सिद्ध है, वह प्राकृत है।
२. जो प्रकृति/साधारण लोगों की भाषा है, वह प्राकृत है।

महाकवि वाक्पतिराज का अभिमत है कि जैसे पानी समुद्र में प्रवेश करता है और समुद्र से ही वाष्प के रूप में बाहर निकलता है। ठीक वैसे ही सब भाषाएं प्राकृत में प्रवेश करती हैं और इसी प्राकृत से सब भाषाएं निकलती हैं।[2] इससे स्पष्ट है कि प्राकृत के आधार पर ही संस्कृत आदि का

---

१. महाभारत, शल्यपर्व ४५।९५,९८ :
नानाचर्मभिराच्छन्ना, नानाभाषाश्च भारत! ।
कुशला देशभाषासु, जल्पन्तोऽन्योन्यमीश्वराः ॥

२. गउडवहो ९३ : सयलाओ इमं वाया विसंति एत्तो य णेंति वायाओ ।
एंति समुद्दं चिय णेंति सायराओ च्चिय जलाइं ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org